अंतरिक्ष विज्ञान एवं युग प्रत्यावर्तन

प्रकाशक:—
युग निर्माण योजना
गायत्री तपोभूमि
मथुरा (उ० प्र०)

लेखक
श्रीराम शर्मा आचार्य

मुद्रक:
युग निर्माण प्रेस
गायत्री तपोभूमि, मथुरा

१९८१

मूल्य
पच्चीस पैसा

अंतरिक्ष विज्ञान एवं युग प्रत्यावर्तन

अन्तरिक्ष विज्ञान, भू विज्ञान से कम महत्वपूर्ण नहीं है। जल और थल की तरह आकाश पर विजय प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील मनुष्य यदि चाहे तो अपने पुरुषार्थ में एक कड़ी और जोड़ सकता है कि ग्रहों के सूक्ष्म प्रभाव से पृथ्वी के वातावरण तथा प्राणी परिवार को जो अनुकूलता प्रतिकूलता सहन करनी पड़ती है उसके सम्बन्ध में उपयुक्त जानकारी प्राप्त करे और तदनुरूप उपाय खोज निकाले। प्राचीन काल में 'ज्योतिष विज्ञान' के दोनों पक्ष हैं—ग्रहों की गतिविधियाँ तथा उनकी सूक्ष्म प्रतिक्रियाओं की जानकारी भली प्रकार उपलब्ध रहती थी फलतः वे प्रतिकूलताओं से बचने तथा अनुकूलताओं से लाभ उठाने का मार्ग भी निकाल लेते थे। मनुष्य ने ज्ञान-विज्ञान को अनेक शाखा-प्रशाखाओं में विकसित करके प्रगति के पथ पर बहुत आगे तक बढ़

चलने में सफलता पाई है। ग्रह विद्या का महत्व इन सबकी तुलना में कम नहीं वरन् अधिक ही है। अन्य विज्ञान, सामयिक, सीमित और सम्बद्ध लोगों को ही प्रभावित करते हैं, पर ग्रहों की सामर्थ्य भी प्रचण्ड है और क्षेत्र भी अत्यन्त व्यापक। ऐसी दशा में उनके साथ जुड़े हुए सम्बन्ध सूत्रों और आदान-प्रदानों के सम्बन्ध में भी हमारी जानकारी उपयुक्त स्तर की होनी चाहिये।

अन्तरिक्ष का महत्व विज्ञान क्षेत्र ने समझा है। इसमें भरी हुई सम्पदा सूक्ष्म होने के कारण धरती और समुद्र में पाये जाने वाले सम्पदा भण्डार से कहीं अधिक है। अब तक भी जो कुछ पाया गया है उसमें जल और थल की अपेक्षा आकाश का अनुदान अधिक है। वर्षा आकाश से होती है। हवा भी आकाश में भरी है। बिजली, रेडियो, लैसर आदि के संचार आकाश से हैं। ध्वनि, ताप, प्रकाश आदि की तरंगों का प्रवाह आकाश में ही चलता है। धरती को अन्तर्ग्रही अनुदान भी उसी क्षेत्र से मिलते हैं। अदृश्य जगत की सत्ता उसी का घोल है। दिव्य प्राणी इसी में निवास करते हैं। विचार तरंगें

इसी में परिभ्रमण करती हैं। ऐसे-ऐसे अनेकों आधार हैं जिनसे स्पष्ट है कि दृश्य भू-मण्डल की तुलना में अदृश्य आकाश में विद्यमान साधन सम्पदा का महत्व और स्तर असंख्य गुना अधिक है।

अध्यात्म विज्ञानी तो अनादि काल से अपनी गति-विधियों को आकाश पर केन्द्रीभूत रखे रहे हैं। अदृश्य जगत्, सूक्ष्म जगत् ही उनका उत्पादन क्षेत्र रहा है। उस कमाई का दृश्य पृथ्वी पर तो खर्च भर करते हैं। ऋद्धि और सिद्धियों का प्रयोग प्रदर्शन ही प्रत्यक्ष है। यह तो उपार्जन का प्रयोग उपभोग करना भर है। जहाँ से यह सब कमाया जाता है वह परोक्ष है। परोक्ष का विस्तार आकाश में है। मानवी अन्तराल में तो उसकी बीज सत्ता भर है। साधना का आरम्भ अन्तराल में किया जाता है, पर उस आरम्भ को प्रतिफल तक पहुँचने के लिए अन्तरिक्षीय शक्तियों का ही सहयोग लेना पड़ता है।

भौतिक विज्ञानी इस तथ्य को अब पहले की अपेक्षा और भी अधिक अच्छी तरह समझने लगे हैं। धरती से वनस्पति और खनिज सम्पदा उपलब्ध करने के प्रयास

चिरकाल से चलते आ रहे हैं। इन दिनों उनमें कटौती की गई है और अन्तरिक्ष की खोज पर पूरा ध्यान केन्द्रित किया गया है। इसका अर्थ यह नहीं कि धरती और समुद्र के उपार्जन की आवश्यकता नहीं रही या वे क्षेत्र अब सम्पदा रहित हो गये। अन्तरिक्ष को प्रमुखता देने का अर्थ है कि वहाँ से अधिक मूल्यवान उपार्जन सम्भव है। उदाहरण के लिए सौर ऊर्जा को लिया जा सकता है। धरती पर कोयला, भाप, तेल, बिजली, अणु यह पाँचों ईंधन जितने उपलब्ध हो सकते हैं वे कम भी पड़ते जा रहे हैं और महंगे भी सिद्ध हो रहे हैं। अस्तु प्रयत्न यह चल रहा है कि सौर ऊर्जा करतलगत की जाय। यह सस्ती और अखूट भी। लैसर से लेकर मृत्यु किरणों तक एक से एक बढ़कर ऐसी शक्तियाँ आकाश से ही उपलब्ध हो रही हैं जो अणु विस्फोट जैसे आत्मघाती युद्धोन्माद के परिणाम उत्पन्न कर सकती हैं। न केवल युद्ध विजय वरन् सुविधा सम्बर्धन की दृष्टि से बहुमूल्य उपलब्धियाँ भी उसी से मिल सकती हैं। उदाहरण के लिए तार, टेलीफोन, रेडियो, टेलीविजन की आवश्यकता

पूरी करने के लिए छोटे-छोटे उपग्रहों से काम लिया जा रहा है। यह पद्धति नितान्त सरल और सस्ती है। सोचा यह जा रहा है कि आकाश विजय के साथ ऋतुओं पर नियन्त्रित किया जा सकेगा। जब जहाँ इच्छा हो, वहाँ उतनी वर्षा करा लेने—गर्मी-सर्दी को घटा-बढ़ा लेने से वनस्पति उपार्जन और प्राणियों की सुविधा में भारी प्रगति हो सकती है। सौर ऊर्जा के हस्तगत होते ही ईंधन का संकट सदा सर्वदा के लिए समाप्त हो जायगा। तब समुद्र की लहरों से बिजली बना लेना और खारी जल को मीठा बना लेने में कोई कठिनाई न रहेगी। यही हैं वे स्वप्न अथवा लक्ष्य जिन्हें पूरा करने के लिए अब विज्ञान, वैभव और वर्चस्व ने मिलकर आकाश विजय की ठान ठानी है।

प्रस्तुत संकटों में सबसे भयानक है वायु प्रदूषण। विषाक्तता बढ़ते जाने से आकाश में कचरा इतना भर गया है कि उसके रहते मनुष्यों एवं प्राणियों के लिये दुर्बलता, रुग्णता दुःख भोगते-भोगते अकाल मृत्यु के मुँह में चले जाने के अतिरिक्त और कोई चारा न रहेगा।

धुँआ, विकरण, कोलाहल आदि ने आकाश को विषवमन करते और अभिशाप बरसते रहने की स्थिति में डाल दिया है। इसका परिशोधन करने का कारगर उपाय एक ही है कि इस कचरे को अनन्त अन्तरिक्ष में कहीं अन्यत्र धकेल दिया जाय। धरती के इर्द-गिर्द फैले हुए वायु मण्डल के घेरे में इस अभिवृद्धि को कैसे रोका जाय? जो भरा हुआ है उसे शुद्ध कैसे किया जाय? इन दोनों प्रश्नों के कोई उत्तर सूझ नहीं रहे हैं, साथ ही यह तक नहीं सूझ रहा है कि दिन-दिन बढ़ने वाला कचरा किस प्रकार रुक सकता है। मशीनों का चलना बन्द किया जा सकना कठिन है। फिर ईंधन जलने और विषैली भाप उड़ने पर भी अंकुश कैसे लगे? इस जीवन-मरण की समस्या के लिए अपने आकाश की महान् आकाश के साथ कुछ तालमेल बिठाने की बात सोचनी पड़ रही है। अन्तरिक्ष का महत्व ऐसे-ऐसे अनेक कारणों से स्वीकारा गया है और उसे अन्वेषण, परीक्षण, आधिपत्य से लेकर दोहन तक के लिये कदम बढ़ाया गया है।

इस सन्दर्भ में यह तथ्य भी ध्यान रखने योग्य है कि

अन्तरिक्ष क्षेत्र से अध्यात्म क्षेत्र को दूर रखने से अब काम चलने वाला नहीं है। वरन् समय को देखते हुये भूत काल की अपेक्षा उस क्षेत्र में अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। भूतकाल में अन्तरिक्ष में कोई संकट नहीं था। प्रतिकूलताओं से लड़ने जैसी कोई बात नहीं थी। अनुकूलताएँ बढ़ाने भर का उद्देश्य सामने था। इसके लिये कुछ थोड़े से ही लक्ष्य और प्रयत्न पर्याप्त माने जाते थे। वर्षा पर नियन्त्रण प्राप्त करने और उसके साथ प्राण तत्व को धरती पर उतारने की पर्जन्य प्रक्रिया काम में लाई जाती थी, फलतः अन्न, बनस्पति एवं पशु-धन की प्रचुरता तथा समर्थता का समुचित लाभ मिलता था। सतयुग में कहीं कोई अभाव नहीं था। इस सन्दर्भ में मानवी प्रयत्न यज्ञोपचार द्वारा अन्तरिक्ष के अनुकूलन के रूप में सफल होते रहते थे। प्राणियों के लिए सबसे प्रमुख आहार वायु है। साँस के द्वारा जो ग्रहण किया जाता है वह मुख के द्वारा खाये और पेट के द्वारा पचाये आहार की तुलना में असंख्य गुना अधिक मूल्यवान है। यज्ञोपचार द्वारा प्राणवायु की उच्चस्तरीय मात्रा जीव-

धारियों को मिलती रहती थी और उनकी शारीरिक ही नहीं मानसिक स्थिति भी ऊँची रहती थी। सतयुग उन्हीं उपलब्धियों की काल परिधि को कहा जाता था।

साधना, स्वाध्याय, सत्संग, मनन, चिन्तन द्वारा प्राणवान आत्माएं आकाश में ऐसे प्रचण्ड प्रवाह छोड़ती थीं जिनमें जन मानस को अनायास ही बहते रहने और श्रेष्ठ चिन्तन का उसके फलस्वरूप उस उत्पादित उच्च चरित्र का लाभ मिलता था। अन्तरिक्ष उच्चस्तरीय विचार सम्पदा से भरा रहता था। इसमें अध्यात्म क्षेत्र के मूर्धन्य मनीषी सदा प्रयत्नरत रहते थे।

ज्योतिर्विज्ञान का एक ओर पक्ष है अन्तर्ग्रही प्रवाहों में हेर-फेर कर सकने की क्षमता का उपार्जन। चेतना की शक्ति का तत्वज्ञान जिन्हें विदित है वे यह भी समझते हैं कि जड़ पर नियमन करने की सामर्थ्य भी उसे प्राप्त है। शरीर के बहुमूल्य यन्त्र को प्राण की चेतना ही चलाती और जीवित रखती है, रेल, मोटर, जहाज स्वसंचालन यन्त्र उपग्रह आदि चलते भले स्वयं हों पर उनका संचालन विचारशील मनुष्य ही करते हैं। उनमें

प्रचण्ड शक्ति विद्यमान तो है पर मात्र अपनी धुरी पर ही परिभ्रमण कर सकती है उसे दिशा देनी हो अथवा उलट-पुलट करनी हो तो उसमें चेतना को ही अपना पुरुषार्थ प्रकट करना होगा। अन्तर्ग्रही प्रवाह जैसे भी चलते हैं उनका सामान्य क्रम अपने ढर्रे पर ही चलता रहेगा। उसमें अतिरिक्त परिवर्तन करना हो तो चेतना की सामर्थ्य का ही उपयोग करना होगा। अन्तर्ग्रही शक्तियों की विशालता और प्रचण्डता अद्भुत है और कल्पनातीत हैं। इतने पर भी यह तथ्य समझा जाना चाहिए कि चेतन की प्राणशक्ति का प्रहार उस प्रवाह में सारे परिवर्तन कर सकता है। ऐसे परिवर्तन जो पृथ्वी के उसके प्राणियों के लिए उत्पन्न अविज्ञात कठिनाइयों को रोकने और अदृश्य अनुदानों को बढ़ाने में समर्थ हो सके। ग्रह विज्ञान की पूर्णता इसी में है कि स्थिति की जानकारी तक सीमित न रहकर अभीष्ट हेर फेर भी कर सके। रोग का निदान ही पर्याप्त नहीं कुशल चिकित्सक को रुग्णता हटाने और आरोग्य बढ़ाने का उपचार भी करना होता है। ज्योतिर्विज्ञान न केवल ग्रह नक्षत्रों की

स्थिति से अवगत कराता है वरन् सूक्ष्म जगत् से उसके अदृश्य प्रभावों के अनुकूलन का भी प्रबन्ध करता है।

जो इन अविज्ञात तथ्यों को समझ सके उन्हें यह जानने में कठिनाई न होगी कि मानव जाति के सामने प्रस्तुत अनेकानेक विभीषिकाओं के पीछे विद्यमान अदृश्य कारणों का निराकरण करने से यह विज्ञान कितना अधिक कारगर हो सकता है। युग निर्माण के लिए मानवी पुरुषार्थ की आवश्यकता और महत्ता तो निश्चित रूप से है ही किन्तु साथ ही समझना यह भी चाहिए कि इस पुष्ट प्रयोजन में अदृश्य शक्तियों का अनुकूलन भी अभीष्ट है। इस क्षेत्र की जानकारी तथा परिवर्तन की विधि व्यवस्था में ज्योतिर्विज्ञान की सहायता लेना आवश्यक है।

इस सन्दर्भ में एक बात और जान लेने योग्य है कि ब्रह्माण्ड में मात्र जड़ ग्रह पिण्ड ही परिभ्रमण नहीं करते इससे सचेतन शक्तियों का अस्तित्व, प्रयास, प्रभाव भी कम नहीं है। ब्रह्माण्ड के शोधकर्त्ता अब इस निष्कर्ष पर पहुँच चुके हैं कि अन्तरिक्ष में पृथ्वी जैसी स्थिति

कितने ही अन्य ग्रहों की भी हैं और उनमें मनुष्यों से भी अधिक विकसित प्राणी रहते हैं। उनका ज्ञान और विज्ञान धरती निवासियों की तुलना में कहीं अधिक बढ़ा-चढ़ा है। यह कपोल कल्पना नहीं है। अब ऐसे प्रमाण मिल रहे हैं जिनसे प्रतीत होता है कि अन्याय ग्रह-नक्षत्रों में न केवल विकसित स्तर के प्राणियों का अस्तित्व है वरन् वे अन्तर्ग्रही उड़ानें उड़कर पृथ्वी निवासियों के साथ सम्पर्क साधने के लिए भी प्रयत्नशील हैं।

उड़न तश्तरियों के पृथ्वी पर आवागमन की बात सर्वविदित है। प्रारम्भ में इन्हें आकाश में वायु, बिजली, गुरुत्वाकर्षण से उत्पन्न प्रकृति-व्यतिक्रम कहा गया। बुद्धि, भ्रम एवं नेत्र विभ्रम की संज्ञा दी गई। दर्शकों के विवरण अत्युक्तिपूर्ण बताये गये, पर जब उड़न तश्तरियाँ अपने प्रत्यक्ष प्रभाव प्रस्तुत करने लगीं तो गम्भीरतापूर्वक उनके अस्तित्व को स्वीकार करना पड़ा। इनके भीतर किन्हीं बुद्धिमान प्राणियों के होने का जो सन्देह किया जाता था। वह भी अब बहुत हद तक दूर हो चुका है। यह भी स्पष्ट है कि यानों और उनके संचालकों का ज्ञान

और विज्ञान हमसे कहीं अधिक बढ़ा-चढ़ा है। प्रकाश से अधिक गति अपनाने वाले यान ही इस प्रकार धरती पर आ सकते हैं। इसी प्रकार अन्तर्ग्रही यात्रा में आने वाले अवरोधों का समाधान भी सामान्य काम नहीं है। फिर इतनी लम्बी यात्राएँ पूरी करके लौटने के लिए ईंधन भी ऐसा चाहिए जो हमारी जानकारी से बाहर है।

इन सुविकसित प्राणियों के साथ सम्पर्क साधना सम्भव हो सके तो निश्चित ही मनुष्यों को विशेष लाभ प्राप्त होगा। निश्चय ही इतनी बड़ी सभ्यता के अधिकारी धरती जैसी दरिद्रा और उस पर रहने वाले पतित पीड़ित लोगों पर आक्रमण करने और यहाँ से लूट ले जाने के लिए इतनी कष्टसाध्य यात्राएँ नहीं कर सकते। उनका उद्देश्य इस लोक के प्राणियों को अपनी उपलब्धियों से लाभान्वित करना ही हो सकता है। भारत के ऋषि, मुनि, समस्त संसार में ज्ञान और विज्ञान का वितरण करने के सदुद्देश्य से परिभ्रमण करते रहे हैं। इससे कम सदुद्देश्य इन अन्तर्ग्रही महा मानवों का भी नहीं हो सकता। वे हमसे सम्पर्क साधने का प्रयत्न करते

हैं, पर वह सधता नहीं। क्योंकि इस लोकवासियों की क्षमता उनकी ओर हाथ बढ़ाने एवं सहयोग करने की नहीं है। इस क्षेत्र में सबसे अधिक बाधक अन्तर्ग्रही विशिष्ट विज्ञान के सम्बन्ध में अपना अनजान होना ही है। यदि विद्या प्राचीनकाल की तरह विकसित स्तर की रही होती तो वह सम्पर्क सध सका होता जिसके लिए उड़न तश्तरियों में—अन्तर्ग्रही यानों में—बैठकर आने वाले महाप्राण प्रयत्नशील हैं।

प्रेतों और पितरों के सम्बन्ध में आस्तिक और नास्तिक, श्रद्धालु और तार्किक कुछ न कुछ जानते और मानते हैं। इनकी भी एक दुनिया है। परलोक, प्रेतलोक, स्वर्ग, नरक आदि के नाम से इसकी चर्चा होती रहती है। यह भी जीवित मनुष्यों जैसी एक दुनिया है। आदान-प्रदान का रास्ता खुला रहता तो जिस प्रकार जलचरों और नभचरों का अस्तित्व मनुष्यों को प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से प्रभावित करता है उसी प्रकार इन दिवंगत आत्माओं का सहयोग जीवितों के लिए कई प्रकार से उपयोगी हो सकता है। जीवाणु, परमाणु,

विषाणु की जानकारी ने मानवी सुविधा क्षेत्र को बढ़ाया है। अनन्त अन्तरिक्ष में बसी हुई इन सूक्ष्म शरीरधारियों की दुनिया यदि जीवितों के साथ सहकार बना सकी होतीं तो दिवंगतों को अतृप्त घूमना न पड़ता और न मनुष्य को उनके दिव्य सहयोग से वंचित रहना पड़ता। दिवंगत स्वजन सम्बन्धियों के साथ प्रेमाचार तो और भी अधिक सरल है।

देवता इससे उँची स्थिति की चेतन सत्ता है। सौर मण्डल के ग्रह और उपग्रह भौतिक दृष्टि से रासायनिक पदार्थों से बने बड़े आकार वाले चलते-फिरते ढेले भर हैं। किन्तु आत्मविज्ञानी जानते हैं कि प्रत्येक जड़ सत्ता का एक चेतन 'अभियान' होता है। उसी के नियमन में इन घटकों को अपनी गतिविधियाँ उपयुक्त रीति से चलाने का अवसर मिलता है। नव ग्रहों को अध्यात्म शास्त्र में देवता माना गया है। खगोल विद्या में वे पदार्थ पिण्ड गिने जाते हैं। अपने-अपने स्थान पर दोनों परिभाषाएँ सही हैं। दिव्यदर्शियों ने तैंतीस कोटि देवता गिनाये हैं। कोटि का अर्थ यहाँ 'करोड़' नहीं 'श्रेणी'

समझा जाना चाहिए। इस समुदाय में ग्रहपिण्ड, निहारिकाएँ, पंचतत्व, पंच प्राण, देवदूत, जीवन मुक्त, व्यवस्थापक, सहायक वर्ग की उन दिव्य सत्ताओं को गिना जा सकता है ओ परब्रह्म न होते हुए भी उसकी व्यवस्था में हाथ बँटाती रहती हैं। देवाराधन की प्रक्रिया से इन्हीं के साथ सम्पर्क साधने और आदान-प्रदान का द्वार खोलने का प्रयत्न किया जाता है।

भू-मण्डल से बाहर अनन्त अन्तरिक्ष बिखरा पड़ा है। है। विज्ञान में पृथ्वी तथा उसके सम्बन्ध वाले अति निकट क्षेत्र से सम्पर्क साधा और अनुसन्धान किया है। इससे बाहर का ब्रह्माण्ड विस्तार अत्यन्त व्यापक है। इसमें पदार्थ भी हैं और चेतना भी। ग्रह-नक्षत्रों से लेकर असंख्य स्तर की ऊर्जा तरंगों तक का पदार्थ भाण्डागार इसी ब्रह्माण्ड में समाया हुआ है। पितरों से लेकर महाप्राण और देव समुदाय तक के अनेकों सूक्ष्म शरीरधारी इसी विस्तार में निवास करते और अपना विशिष्ट संसार चलाते हैं। यह प्रत्यक्ष और परोक्ष आज एक-दूसरे के साथ ऐच्छिक आदान-प्रदान स्थापित नहीं हो पा रहा

है। प्रकृति प्रवाह से जो अनायास ही मिल जाता है उतने भर से सन्तुष्ट रहना पड़ रहा है।

युग परिवर्तन और नव सृजन के लिए मात्र मनुष्यों के ज्ञान, श्रम एवं साधना का नियोजन तो होना ही चाहिए, पर उतने से ही इतना बड़ा कार्य सम्पन्न हो नहीं सकेगा। परिवर्तन की अधिकाश प्रक्रिया सूक्ष्म जगत में सम्पन्न होगी। प्रत्यक्ष में तो उसकी प्रतिक्रिया भर दृष्टि-गोचर होगी। इस प्रयोजन के लिए जागृत आत्माओं की तत्परता और विभूतियों की सहायता को जहाँ आमन्त्रित किया गया है वहाँ परोक्ष का सहयोग प्राप्त करने की आवश्यकता को भी ध्यान में रखा गया है। ज्योति-विज्ञान का पुनः निर्धारण इसी पूर्ति के लिए किया जा रहा है।

॥ समाप्त ॥

माहेश्वरी प्रिण्टर्स, डी-५ इन्ड्रस्ट्रियल एरिया, मथुरा।

अध्यात्म विज्ञान की अद्भुत पत्रिका--
अखण्ड ज्योति (मासिक)

एक ऐसा मासिक जिसमें धर्म और दर्शन जैसे दुरूह विषय को तर्क, प्रमाण, विज्ञान एवं बुद्धिसंगत प्रतिपादन के रूप में सरस, सरल और बोधगम्य शैली में प्रस्तुत किया जाता है। एक लाख नियमित सदस्य। २४ लाख पाठक। ४३ वर्षों से निरन्तर निकल रही है। करोड़ों व्यक्तियों को प्रकाश देने वाली उच्चस्तरीय सामग्री। पृष्ठ संख्या ५६। आकर्षक मुखपृष्ठ। वार्षिक मूल्य बारह रुपये मात्र।

पता—अखण्ड ज्योति संस्थान,
घीयामण्डी, मथुरा (उ० प्र०)